REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.2331(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 7 | ISSUE - 10 | JULY - 2018

ब्रिटिश कालीन शिक्षा –व्यवस्था

नवीन कुमार श्रीवास्तव
शिक्षाशास्त्र(शिक्षा संकाय) , राजा श्रीकृष्ण दत्त स्नातकोत्तर
महाविद्यालय, जौनपुर (उ0प्र0)

प्रस्तावना

ब्रिटिश आधुनिक काल में प्रभुत्तवशाली वर्ग तीन थे जिनकी अपनी–अपनी विचारधाराएं थी जो उनके अपने निहित स्वार्थ या उसकी सामाजिक सांस्कृतिक दशाओं से उपज थी। ब्रिटिश प्रशासकों की विचारधारा साम्राज्यवादी थी। भारतीय सभ्यता और संस्कृति के बारे में उनके विचार बहुत ही अपमानजनक थे। अंग्रेजों के अनुसार भारतीय सभ्यता अन्ध–विश्वासों से ग्रस्त, पुजारियों से त्रस्त और आधुनिक यूरोपीय संस्कृति से हीन थी। जबकि इसाई मिशनरी दूसरे धर्मों पर ईसाइयत की श्रेष्ठता में विश्वास रखते थे। उनका विचार भी था कि ईसाइयत का प्रचार–प्रसार हिन्दू समाज के उद्धार का एक मात्र रास्ता था जो छद्म धार्मिक विश्वासों, अंध–विश्वासों और अज्ञान का दास बना हुआ था। उस समय भारत में अंग्रेज, इसाई, हिन्दू और मुसलमान सभी थे लेकिन उनमें एक व्यूह राष्ट्रवादियों का था। भारतीय पुनर्जागरण से पैदा यह समूह विचारधारा से देश–भक्त था, जो भारतीय धर्मों और संस्कृति का आदर करता था तथा भारतीय समाज में व्याप्त कुछ सामाजिक बुराईयों के प्रति सजग था। उसका विश्वास था कि भारत की समस्याओं का वास्तविक समाधान जनता की सामाजिक–आर्थिक दशाओं के सुधार में निहित था।

इसाई मिशनरी भारत में ईसा के उपदेशों का प्रचार करने और भारतीयों को इसाई बनाने के लिए आये इसलिए उन्होनें ईसाइयत के प्रचार–प्रसार के लिए साधन के रूप में अंग्रेजी शिक्षा का रास्ता अपनाया। उन्होनें अपनी संस्थाओं में व्यावसायिक शिक्षा का आयोजन भी किया। नव–ईसाइयों के आर्थिक, सांस्कृतिक और सामाजिक जीवन का सुधार इन मिशनरियों का सरोकार था।

1813 से पहले तक कंपनी भारत में मिशनरी गतिविधियों का विरोध करती रही। लेकिन 1813 के चार्टर कानून ने मिशनरियों को भारत में आने और अंग्रेजी विद्यालय खोलने के लिए प्रोत्साहित किया। कंपनी ने भारत में शिक्षा के लिए एक लाख रूपये का प्रावधान किया। जनता अब अंग्रेजी भाषा में गहरी दिलचस्पी लेने लगी। देश की भावी शिक्षा–प्रणाली और उसकी विधि को लेकर अलग–अलग मत व्यक्त किये गये। मुख्य रूप से विवाद आंग्लवादियों और प्राच्यवादियों के बीच था। आंग्लवादी पाश्चात्य विज्ञान और विचारों का समावेश चाहते थे जबकि प्राच्यवादी संस्कृत भाषा के माध्यम से वैदिक शिक्षा जारी रखना चाहते थे। उच्च–शिक्षा में शिक्षण के माध्यम को लेकर भी विवाद चला। कुछ लोग उच्च–शिक्षा के माध्यम के रूप में अंग्रेजी, कुछ संस्कृत और लोग दूसरी देशी भाषाओं के पक्ष मे थे। अलेक्जेण्डर डफ के नेतृत्व में मिशनरियों ने आंग्लवादियों का साथ दिया। राजाराम मोहन राय जैसे अनेक भारतीय भी पाश्चात्य शिक्षा के पक्ष में थे। 1834 में मैकाले के दस्तावेज ने भारत में उच्च–शिक्षा के भविष्य का हमेशा–हमेशा के लिए फैसला कर दिया। भारत के गवर्नर जनरल विलियम बेटिंग ने 7 मार्च 1835 को घोषणा की कि सरकार ने देशी जनता को यूरोपीय साहित्य और विज्ञान की शिक्षा देने के लिए प्रोत्साहित करने का फैसला किया है और यह कि शिक्षा का माध्यम (भाषा) अंग्रेजी होगी। यह भारतीय शिक्षा के इतिहास मे नया मोड़ था।

1835 में मैकाले के दस्तावेज का बैटिग द्वारा स्वीकार किया जाना आधुनिक भारत के शैक्षिक विकास का पहला प्रमुख पड़ाव था। उसके बाद सरकार ने भारतीय शिक्षा की जिम्मेदारी संभाली। फलस्वरूप 1835 के बाद अंग्रेजी के ज्ञान को सरकारी नौकरी के लिए अनिवार्य घोषित कर दिया गया। अंग्रेजी शिक्षा समाज के उच्च तथा मध्य वर्गों के जरूरतों को पूरा करती थी। सरकार ने प्राथमिक शिक्षा और जनशिक्षा में कोई रूचि नहीं दिखाईं।

बीसवीं सदी के आरम्भ तक जोर पकड़ लेने वाली भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन ने शिक्षा को प्रभावित किया । उस समय के राष्ट्रवादी परतंत्र नौकरशाही की जगह स्वतंत्र और स्वाधीन प्रवृत्ति वाले युवक तैयार करने को शिक्षा का मुख्य उद्देश्य मानते थे। कदम–कदम पर राष्ट्रीय–भावना जगाना और राष्ट्रीय–चरित्र का विकास करना राष्ट्रीय–शिक्षा का मुख्य उद्देश्य था। कुछ अन्य तत्कालीन दशाओं के कारण राष्ट्रवाद का उदय हुआ जो पूरी तरह देश–भक्त भारतीय राष्ट्रवादी विचारधारा पर आधारित था और यह विचारधारा अंग्रेजी शासकों और मिशनरियों की विचारधारा से अलग थी। अधिकाधिक भारतीयों के समर्थन में आने के कारण यह राष्ट्रवादी समूह धीरे–धीरे बल पाने लगा। उन्होने अन्ततः भारतीयों को कुछ सामाजिक बुराईयों तथा दासता और हीनता आदि को शिक्षा के माध्यम के रूप में अंग्रेजी को हटाने की बात की गयी। महात्मा गांधी शिक्षा की भाषा अंग्रेजी की जगह 'हिन्दुस्तानी' करना चाहते थे। राष्ट्रीय शिक्षा में गांधीजी का योगदान बुनियादी–शिक्षा योजना रूप में व्यक्त हुआ जिसका लक्ष्य छात्रों को किसी न किसी प्रकार उत्पादन कार्य के साथ शिक्षा प्रदान करना था जिसका उद्देश्य देशज आवश्यकताओं को पूरा करना था।

ब्रिटिश शिक्षा–प्रणाली, अनेक खामियों के बावजूद भारत में आधुनिक शिक्षा की शुरूआत हेतु एक प्रगतिशील कार्य था। यह शिक्षा धर्म–निरपेक्ष, उदारतावादी और जाति धर्म का ख्याल किये बिना सर्वसुलभ थी, इस शिक्षा–प्रणाली ने भारतीयों के लिए आधुनिक पाश्चात्य सभ्यता के बुद्धिवादी और प्रजातांत्रिक विचारों के विशाल भण्डार का द्वार खोल दिया। शिक्षित भारतीयों एवं मिशनरियों ने भारत की आधुनिक भाषाओं के व्याकरण ग्रन्थ, शब्दकोष आदि तैयार किये। सार्वजनिक शिक्षा के सहायक साधनों का परिचय कराया जैसे मुद्रणालय, रेडियों, सिनेमा आदि कृषि तकनीकी, शिक्षण–प्रशिक्षण अदि। कुछ लोग यह भी मानते है कि मानवतावादी प्रवृत्तियां भी इसी शिक्षा की देन है।

स्वतंत्र भारत के नीति–निर्माताओं के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती उपनिवेशवादी शासकों से विरासत में मिली शिक्षा–प्रणाली के ढ़ाचें की खामियों को दूर करना और भारतीय राजनितिक सामाजिक दर्शन के अनुसार रूपान्तरण करना प्रमुख लक्ष्य था। 1968 तक भारत में अधिकाधिक रूप से राष्ट्रीय शिक्षा–नीति की घोषणा नही की गयी थी किन्तु विभिन्न स्तरों में आये दोषों को दूर करने के लिए समय–समय पर शिक्षा आयोगों की स्थापना अवश्य की गई। 1948 में डॉ0 राधाकृष्णन आयोग, 1952–53 में माध्यमिक शिक्षा आयोग, के रूप में महत्वपूर्ण कदम उठाये गये जिनके सुझावों ने शिक्षा में आयी कमियों को दूर करने का प्रयास किया। शिक्षा–प्रणाली का समग्र रूप से पहली बार मूल्यांकन एवं सुधार के लिए 1964–66 में डॉ डी0एस0 कोठारी की अध्यक्षता में 'शिक्षा आयोग' के माध्यम से प्रयास किया गया। शिक्षा आयोग को यह भार सौंपा गया कि शिक्षा के सभी स्तरों पर और सभी पार्श्वों पर शिक्षा–प्रणाली की देश की आवश्यकता व आकांक्षा के अनुरूप ढाल सकने का सुझाव दे। आयोग ने यह आवश्यकता प्रतिपादित की कि भारत की आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक पुर्नरचना के लिए शिक्षण–प्रणाली में तीन आधारों पर सुधार आवश्यक है–

1. आन्तरिक रूपान्तरण ताकि शिक्षा का संबंध राष्ट्र के जीवन उसकी आवश्यकताओं व आकांक्षाओं से जुड़ जाये।
2. शिक्षा में गुणात्मक सुधार जिससे अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि से हम समतुल्य हो सके।
3. शिक्षा संबंधी सुविधाओं का विस्तार जिसका आधार मोटे तौर पर जन–शक्ति संबंधी आवश्यकतायें हो तथा शिक्षा संबंधी अवसरों को समान बनाने पर जोर देना हो।

जनवरी 1968 में प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने राष्ट्रीय एकता को ध्यान में रखते हुए देश के लिए नई शिक्षा–नीति राष्ट्र के नाम जारी किया। इसमें कुल 157 बिन्दुओं के अर्न्तगत राष्ट्रीय शिक्षा–नीति का निबद्ध करके 12 मुख्य खण्डों में प्रस्तुत किया गया है। नयी शिक्षा नीति की समीक्षा के लिए राममूर्ति कमेटी (1990) का

गठन किया। बस्ते का वजन कम करने के लिए यशपाल समिति (1994) का गठन किया गया। इन आयोगों के सुझाव के बाद भी आज भी भारतीय शिक्षा–प्रणाली सम–सामयिक आवश्यकताओं एवं परिवर्तनों के साथ समायोजन करने में न्याय न कर सकी।

उपर्युक्त परिस्थितियों के कारण भारतीय समाज में एक नया शिक्षित वर्ग तैयार हुआ। एक वर्ग जहां राष्ट्रवादी मूल्यों से प्रेरित होकर स्वतंत्रता आन्दोलन का नेतृत्व किया, वही दूसरा समूह ब्रिटिश हितों के लिए (नौकरशाही) काम किया। तथापि भारतीय समाज में व्याप्त बुराईयों को दूर करने का प्रयत्न इसी शिक्षित वर्ग ने किया। राजा राममोहन राय से जो परम्परा शुरू हुई वह महात्मा गांधी के समय तक आते–आते व्यापक फलक ग्रहण कर लेती है। महात्मागांधी ने अपने समय में न केवल राजनीतिक नेतृत्व किया अपितु भारतीय समाज एवं संस्कृति को भी व्यापक रूप से वैचारिक दृष्टि प्रदान की। रविन्द्रनाथ टैगोर ने प्रकृति की गोद में उन्मुक्त शिक्षा को बल देकर शान्ति–निकेतन की स्थापना करके शिक्षा के क्षेत्र में व्यापक योगदान दिया। इस प्रकार इन दोनों महापुरूषों ने अपने दौर के समाज को नेतृत्व प्रदान किया एंव अपने समकालीन परिवेश को प्रभावित किया तथा भविष्य के लिए दृष्टि प्रदान किये।